IJAER/Jan-Feb 2022/Volume-11/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

प्रेमचंद की कहानियों में नारी संवेदना

नीति खरे
सहायक प्रोफेसर
रूंगटा कॉलेज

सारांश–

प्रेमचंद का कथा साहित्य भारतीय जनमानस की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं पर एक व्यापक दृष्टिकोण को लेकर रचा गया है। प्रेमचंद अपनी कहानियों में समाज की मूक जनता के साथ–साथ हाशिए पर खड़ी नारी समस्याओं पर केवल चर्चा नहीं करते अपितु नारी मुक्ति की भी बात करते हैं। प्रेमचंद श्नारी अस्मिताश के लिए नारियों को स्वयं जागृत होने की सलाह देते हैं। प्रेमचंद नारी जागरण की अलख जगाने के लिए घर–घर की नारियों का आह्वान करते हैं। जिसमें कोई सामाजिक विभेद नहीं दिखाई पड़ता। वर्षों पहले अपने साहित्य द्वारा प्रेमचंद ने नारी अस्मिता और मूल्यों के लिए जो संघर्ष किया वह नवजागरण के इतिहास में बहुत बड़ा योगदान है। यही कारण है कि आज भी प्रेमचंद का श्स्त्री विमर्श' प्रासंगिक बना हुआ है।

मुख्य शब्द: *प्रेमचंद , नारीसंवेदना*

परिचय

हम साहित्य को केवल मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नहीं समझते। हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाईयों का सार एवं प्रकाश हो – जो हममें गति, संघर्ष और बैचेनी पैदा करें, सुलाए नहीं, क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है। (प्रेमचन्द, प्रगतिशील लेखक संघ के प्रथम अधिवेशन में दिए गए अध्यक्षीय उद्बोधन का अंश)प्रेमचन्द न केवल हिन्दी अपितु सम्पूर्ण भारतीय साहित्य के कथाकारों में सर्वोपरि स्थान के अधिकारी हैं। वे कहानी लेखन के क्षेत्र में अप्रतिम रचनाकार माने जाते हैं। आदर्शवादी होने के बावजूद उन्होंने यथार्थ की जैसी समुचित स्थापना की है वैसी अन्यत्र दुर्लभ है। इनके कारण ही हिंदी कहानी लेखन को स्वतंत्र एवं मौलिक व्यक्तित्व प्राप्त हुआ।

भारतीय नारी के सम्बन्ध में प्रेमचन्द की दृष्टि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' की धारणा की विरोधी कदापि न थी, किन्तु इसके पीछे छिपी संकीर्णता में वे सिमटे नहीं थे। जीवन के यथार्थ एवं समकालीन सामाजिक रूढ़ियों तथा परम्पराओं में जकड़ी नारी के प्रति उनकी संवेदनाएं देशकाल के

अनुरुप और प्रायः उनकी सीमाओं से परे निकलकर बहुत कुछ ऐसा देती रहीं जो अनुसंधान चिंतन को भी चौकाने में समर्थ है। प्रेमचन्द का क्रांति दृष्टा वैचारिक चिंतन नारी जीवन के हर रुप को आककर प्रस्तुत करता रहा है। नारी मन के सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव भी उनके लिए अनदेखे नहीं रहे।

उन्होंने युगीन नारी के करुण क्रन्दन की भली भांति सुना, उसके ऊपर होने वाले अत्याचारों को देखा। सृष्टि का निर्माण करने वाली नारी को आँसुओं के घूट पीते देख वे व्याकुल हो उठे और उनकी लेखनी पतिता नारी में नारी गरिमा का दर्शन करने लगी। उन्होंने न केवल नारी की कारुणिक स्थिति का चित्रण किया अपितु उन परिस्थितियों से जूझती जुझा: नारी को भी हमारे समक्ष रखा।

प्रेमचन्द बेमेल विवाह के विरोधी थे और ये विवाह स्त्री जीवन में क्या–क्या समस्याएँ लेकर आते हैं इसका यथार्थ चित्रण 'नरक का मार्ग' और 'नया विवाह' कहानियों में सफलता से किया गया है। सुशीला जो एक सुन्दर, सुशील और सुघड़ युवती है उसका विवाह एक बूढ़े से हो जाता है। वैवाहिक सुख की प्राप्ति न होने के कारण पति की मृत्यु के बाद सच्चे प्रेम की तलाश में वह घर छोड़कर निकल पड़ती है किन्तु पाप की गर्त में जा गिरती है। वह अपनी दुर्दशा के लिया अपने पति और पिता को जिम्मेदार ठहराते हुए अपना दुख व्यक्त करती हुयी कहती है। ''कभी–कभी मुझे बेचारे पर दया आती है। यह नहीं समझते कि नारी जीवन में कोई ऐसी वस्तु भी है जिसे खोकर उसकी आँखों में स्वर्ग भी नरक तुल्य हो जाता है।'' नया विवाह की आशा अपने से काफी बड़ी उम्र के पति को पाकर खुश नहीं है। वह अपने धर्म को निभाना जानती है किन्तु यौवन की उद्दाम आकांक्षाएं उसे घर के नौकर के प्रति आकर्षित कर देती हैं। जब जुगल आशा के रूप सौंदर्य की प्रशंसा करता है तो उसका मन उमंग से भर उठता है। वह सोचती है ''लाला डंगामल ने असंख्य बार आशा में रूप और यौवन की प्रशंसा की थी मगर उनकी प्रशंसा में उसे बनावट की गंध आती थी। वह शब्द उनके मुख से निकलकर कुछ ऐसे लगते थे जैसे कोई पंगु दोड़ने की चेष्टा कर रहा हो। जुगल के इन सीधे शब्दों में एक उन्माद था, एक चोट थी। आशा की सारी देह प्रकाशित हो गयी।''

सौत कहानी में लेखक ने गोदावरी के रूप में एक ऐसे चरित्र की उद्भावना की है जो प्रेम, त्याग, बलिदान के साथ–साथ स्त्री सुलभ ईर्ष्या से भी भरी हुई है। औलाद की चाह में वह अपने पति का दूसरा विवाह कराकर सबकी नजरों त्याग की मूर्ति तो बन जाती है किन्तु सौतन के घर आने पर द्वेष व ईर्ष्या के भाव भी हृदय में जागने लगते हैं। जब वह अपने ही पति को अपनी सौत के संग देखती तो बैचेन हो जाती, ''उसके हृदय में एक ओर गोमती के प्रति ईर्ष्या की प्रचण्ड अग्नि दहका देती, दूसरी ओर पण्डित देवदत्त पर निष्ठुरता और स्वार्थप्रियता का दोषारोपण करती।''

प्रेमचन्द की कहानियों में नारी का बहु आयामी वर्णन मिलता है। जहाँ एक ओर गोदावरी, आशा जैसे चरित्र है जो अपनी ही दुर्बलताओं से घिरे हैं तो कुसुम, रामप्यारी, सुभद्रा जैसे चरित्र भी हैं जो जीवन संघर्षों पर विजय प्राप्त करती है। कुसुम प्रेम एवं साहस की जीवन्त रूप है जिसका विवाह पढ़े–लिखे सुंदर युवक से होता है किन्तु दहेज में नगद रुपये न मिलने के कारण कुसुम का परित्याग कर देता है और जब कुसुम को यह पता चलता है कि उसके पिता पैसे देने को तैयार है तो वह उसका विरोध

करते हुए कहती है – ''जो आदमी इतना स्वार्थी, इतना दंभी, इतना नीच है उसके साथ मेरा निर्वाह न होगा। मैं कहे देती हूँ वहाँ रुपये गए तो मैं जहर खा लूंगी।''

'सोहाग का शव' कहानी की नायिका सुभद्रा भी अपने पति द्वारा धोखा दिए जाने पर रोती गिड़गिड़ाती नहीं अपितु अपने स्वतंत्र अस्तित्व की घोषणा करती है। जब उसे पता चलता है कि लन्दन जाकर केशव किसी अन्य लड़की से विवाह कर रहा है तो वह उसका विरोध नहीं करती अपितु उस परिस्थिति में भी स्त्री जन्य सारी दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त करती है। वह कहती है ''क्या पुरुष हो जाने से सारी बातें क्षम्य और स्त्री हो जाने से सभी बातें अक्षम्य हो जाती हैं।''

नारी के विद्रोही रुप के साथ–साथ प्रेमचन्द में प्रेम, त्याग एवं स्वाभिमान से पूर्ण नारी को भी हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है। दूजी के रुप में लेखक ने एक ऐसे चरित्र को उभारा है जो प्रेम एवं कर्त्तव्य दोनों का समान निर्वाह करती है। वह अपने प्रेमी की हत्या किये जाने के आरोप में अपने भाईयों को जेल करवा देती है और दूसरी और अपने भाईयों के प्रति अपने कर्त्तव्य निर्वाह के लिए 14 वर्ष जंगल में रहती है और अंत में भाईयों से मिलकर अपने प्राण त्याग देती है। 'माता का हृदय' कहानी में माधवी अपने इकलौते पुत्र की मृत्यु का बदला लेने के लिए उसकी मृत्यु के लिए जिम्मेदार पुलिस अफसर के घर काम करने लगती है किन्तु उसके छोटे से बालक के मोह में इतनी वशीभूत हो जाती है कि अपना बदला भूल उस पर अपनी ममता लुटाने लगती है और उसकी मृत्यु पर फूट–फूट कर रोने लगती है। जिसका वर्णन करते हुए प्रेमचन्द जी कहते हैं – ''माता का हृदय दया का आगार है। उसे जलाओ तो उसमें दया की ही गंध निकलती है। पीसो तो दया का ही रस निकलता है। यह देवी है। विपत्ति की क्रूर लीलाएँ भी उस स्वच्छ निर्मल स्रोत को मलिन नहीं कर सकतीं।''

'स्वामिनी' कहानी की नायिका रामप्यारी भी अपने पति की मृत्यु के बाद टूटती बिखरती नहीं अपितु सारे घर का दायित्व अपने कंधों पर लेकर अपना सब कुछ परिवार पर समर्पित कर देती है। रामप्यारी के रुप में एक ऐसे चरित्र की सृष्टि लेखक ने की है जो सामान्य होते हुए भी विशिष्ट है जिसके विषय में लेखक कहता है – 'एक–एक करके प्यारी के गहने उसके हाथों से निकलते जाते थे। वह चाहती थी मेरा घर गांव में सबसे सम्पन्न समझा जाए। कभी घर की मरम्मत के लिए, कभी बैलों की नई गोई खरीदने के लिए, कभी नातेदारों के व्यवहारों के लिए, कभी बीमारों की दवा दारु के लिए रुपयों की जरूरत पड़ती रहती और वह अपनी कोई न कोई चीज निकाल देती।''

इस प्रकार प्रेमचन्द की कहानियों में नारी का प्रत्येक रुप हमारे समक्ष साकार हो उठी है। कहीं वह स्त्री सुलभ दुर्बलताओं से घिरी दिखाई देती है तो कहीं सारी दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त करती हुई। कही उसके चरित्र में अग्नि की प्रचण्डता है जो कहीं जल भी भांति शांति व निर्मलता। कहीं वह आतातायियों का विरोध करने के लिए चण्डी का रुप धारण करती दिखाई देती है तो कहीं ममता की मूर्ति बन अपना सर्वस्व न्योछावर करती हुई।

उद्देश्य

1. भारतीय साहित्य के कथाकारों में सर्वोपरि स्थान पर अध्ययन
2. प्रेमचन्द की कहानियों में नारी का प्रत्येक रुप हमारे समक्ष साकार हो उठी है।

नारी संवेदना का स्वरूप तथा पृष्ठभूमि

जो सृजन का आधार बन सकती है, वहीं सृष्टि के विनाश का कारण भी तो बन सकती है। इस सत्य को जानते हुए भी हमारा समाज इसे नकार रहा है। भारतवर्ष को हम भारतमाता कह कर पुकारते है। लेकिन इसी भारतभूमि मे स्त्री बार–बार तिरष्कृत होती है, अपमानित होती है, उसके आत्मसम्मान का हनन किया जाता है। अरविंद जैन का मत यहाँ उल्लेखनीय है, पिछले दो दशकों में (भारत में) हजारों समाजसेवी संस्थाओं की स्थापना, गोष्ठी, सेमिनार और अरबों रुपए की सरकारी, गैर–सरकारी, देशी–विदेशी मदद, अनुदान और योजनाओं का कुल परिणाम क्या है ? क्या भारतीय समाज में आम औरतों की स्थिति में कोई गुणात्मक सार्थक बदलाव आ पाया ? इस दौरान कोई राष्ट्रीय–प्रांतीय स्तर का बड़ा नारी आंदोलन ? आम भारतीय औरतों (विशेषकर ग्रामीण) की हालात हर जगह पहले से बदतर हुई है। भारत की ग्रामीण स्त्री की स्थिति को देखकर भला कौन कहेगा कि भारत की स्त्री आज आजाद है !! गाँव ही नहीं बल्कि शहरों में भी स्थिति वहीं है. केवल कुछ गिने–चुने ही ऐसे हैं, जिन्हं अपने अधिकार प्राप्त हुए हैं।

आज भी जो सड़कों पर अकेली घूम नहीं सकती हैं, अपने जीवन के फैसले लेने का जिनको अब भी कोई अधिकार नहीं हैं, जिसे अब भी भारत के भिन्न कोनों में गर्भ में ही मार दिया जाता हैं. क्या वह आजाद हैं ? आजादी की परिभाषा केवल कागज के पन्नों पर लिखी काले अक्षरों की है, वास्तविकता तो खैर कुछ और है...जिससे आप, मैं, हम सब अच्छे से वाकिफ हैं । इस संदर्भ में मैत्रेयी पुष्पा का कथन उल्लेखनीय है, "महिलाओं के उद्धार की असली तस्वीर कोइ ंमहिला ही पेश कर दे तो तस्वीर दागदार हो जाएगी, तब महत्त्व सिकुड़ने लगेगा। औरत का न बोलना कितना लाभदायक है कि कोई चाहे जैसे निर्णय ले सकता है, नियम कानून बना सकता है, अपनी क्षमता को कई गुना बढ़ाकर दिखा सकता है।

साहित्य की समीक्षा

डॉ0 निर्मम के अनुसार–"हिन्दी उपन्यास में मध्यवर्ग का सामाजिकविश्लेषणका जो, 'परीक्षागुरू' में मिलता है, उसके पुनः दर्षन 'सेवासदन' (1918) से पूर्व किसी उपन्यास में नही होते। इंग्लैण्ड आदि पाष्चात्य देषों मे मध्यवर्ग के उद्भव की परिस्थितियाँ भिन्न थी। वहाँ औद्योगीकरण के कारण सामन्ती समाज का अस्तित्व मिटने लगा और मध्यवर्ग का विकास होने लगा था। भारत में मध्यवर्ग के विकास में अंग्रेज़ी षिक्षा सहायक हुई है।" इस प्रकार हिन्दी उपन्यास में मध्यवर्ग का चित्रण हमें सबसे पहले 'परीक्षागुरू' में देखने को मिला इसके पश्चात् उसका पुनः चित्रण 'सेवासदन' में हुआ। विदेषी राज्यों व भारतीय मध्यवर्ग की परिस्थितियाँ अलग–अलग थी। औद्योगीकरण के पश्चात् जैसी सामन्ती व्यवस्था समाप्त हुई, वैसे ही मध्यवर्ग का विकास हुआ तथा उस विकास में अंग्रेजी षिक्षा बहुत सहायक सिद्ध हुई। अतः स्पष्ट है कि उपन्यासों में मध्यवर्ग का उद्भव और विकास भारतीय दृष्टि से न ही

औद्योगीकरण के समानान्तर हुआ है और न ही औद्योगीकरण के तुरन्त बाद में हुआ, बल्कि मध्यवर्ग का उद्‌भव और विकास उससे कुछ समय पहले हुआ जिसे हम प्रेमचन्द–युग में उभरते हुए प्रगतिषील मध्यवर्ग के रूप में देख सकते है।

डॉ0 घोष के अनुसार–"शहरी मध्यवर्ग, मध्यवर्ग के सामाजिकविश्लेषणउस हिस्से को कहते हैं जो शहरों में रहता है, इसमें मुख्यतः नौकरपेषा, औद्योगिक और व्यावसायिक क्षेत्रों के मध्यवर्गीय लोगों की गिनती होती है।" अतः शहरी मध्यवर्ग वह हुआ जो शहरों में निवास करता है। उद्योग धन्धे मुख्य रूप से शहरों में स्थापित किए जाते हैं क्योंकि वहाँ उद्योग से सम्बन्धित सभी प्रकार की सुविधाएँ तथा वातावरण उपलब्ध होता है। प्रायः बड़े उद्योग धन्धे जो बहुत अधिक जनसंख्या वाले शहरों में स्थापित नहीं किए जा सकते शहर से बहुत अधिक दूरी पर या गाँवों के क्षेत्रों में स्थापित किये जाते हैं। लेकिन उद्योग धन्धों का विकास होते ही गाँवों का क्षेत्र शहरी वातावरण में परिवर्तित होने लगता है इस प्रकार वह देहाती क्षेत्र नहीं रह जाता है। इसलिए उद्योग से सम्बन्धित मध्यवर्ग मुख्य रूप से शहरी मध्यवर्ग के अन्तर्गत आता है।

फणीश्वरनाथ रेणु ने जीवन सत्य को ही मैला आंचल उपन्यास में उतारने की। कोशिश की। उन्होंने उपन्यास की भूमिका में लिखा– "मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गाँव को पिछड़े गाँव का प्रतीक मानकर इस उपन्यास का कथाक्षेत्र बनाया है।... इसमें फूल भी है शूल भी, धूल भी है गुलाल भी, कीचड़ भी है चन्दन भी, सुन्दरता भी है कुरूपता भी– मैं किसी से भी दामन बचाकर निकल नहीं पाया। उपन्यासकार समाज का विश्लेषक, मार्गदर्शक एवं निर्मम समीक्षक होता है। ऐसी स्थिति में उपन्यासकार का व्यक्तित्व और उसकी विचारधारा रचना प्रक्रिया को प्रभावित करती है। सामाजिक विकास की प्रक्रिया में उपन्यासकार अपने उत्तरदायित्व को बखूबी निभाता है। डा0 रामविलास शर्मा ने लिखा है– "साहित्य की विषय वस्तु की तरह उसके रूप भी सामाजिक विकास से सम्बद्ध हैं। यूरोप में उपन्यास की रचना पूँजीवादी युग में हुई। फॉक्स ने उपन्यास को पूँजीवादी साहित्य का अपना विशिष्ट रूप कहा। कला मूलतः समाज सापेक्ष होती है। सामाजिक विकास के साथ–साथ उसका विकास भी होता है। उपन्यास अपने समय की सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने का यथासम्भव प्रयास करता है। जो रचनाएँ ऐसा नहीं कर पाती वे कालजयी रचनाएँ नहीं बन पाती।

डॉ. प्रतापनारायण टंड़न के मतानुसार – ''अब कर्मभूमि का कथा क्षेत्र नगर से हटकर एक गांव में केन्द्रित हो जाता है। वहीं पर अमरकान्त अछूतों की बस्ती में रहने लगता है। वहीं उसकी भेंट मुन्नी से भी होती है। वह निकटवर्ती स्थानों में राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न करने की चेष्टा करता है। उसे उन अनेक कष्टों का पता चलता है, जिनसे ग्रामीण जनता सदैव ग्रस्त रहती है। एक आन्दोलन के रूप मैं वह सुधार कार्य आरंभ करता है।गोदान' का विद्रोही पात्र गोबर शहर जाकर वहाँ चल रहे आन्दोलनों को देखता है, उनमें भाग लेता है और नुक्कड़ों पर होने वाली आम सभाओं एव भाषणों को भी सुनने जाता है। उसके आचार–विचार में इन भाषणों को सुनकर परिवर्तन होने लगता है। वह गांव आकर

जमींदार, सेठ, साहूकारों और पंड़ितों के प्रति अपने पिता से रोष प्रकट करता है। वह मनी मन अपने परिवार की स्थिति पर खेद प्रकट करता हुआ सोचता है।

जनेश्वर वर्मा का कथन है–'' कृषक वर्ग का शोषण सामान्यतः चार प्रकार के लागों द्वारा किया जाता है– एक तो जमींदार, दूसरे साहूकार या महाजन, तीसरे धर्माचार्य और चौथे सरकारी अफसर और कारिन्दे। इन सबके सम्मिश्रण शोषण का परिणाम यह होता है कि घर जमीन अदि सब कुछ खोकर किसान से मजदूर बन जाता है। यही किसान मजदूर बनकर काम की तलाश में शहरों में जाते हैं और मिल मजदूर बनते हैं, जहाँ उनके अंदर राजनीतिक जागृति और वर्ग चेतना का संचार होता है।''

डॉ प्रकाश कुमार अग्रवाल(2019) प्रेमचंद स्वाधीनता आंदोलन के युग के उपन्यासकार हैं और नागार्जुन स्वातंर्त्योत्तर युगीन। लेकिन दोनों ने युगीन राजनीतिक साम्प्रदायिक समस्याओं की ओर ध्यान दिया है। प्रेमचंद स्वाधीनता आंदोलन युग के जागरूक उपन्यासकार हैं ।इन्होंने देश के स्वाधीनता विषयक विचारों का प्रचार तथा प्रतिपादन साहित्य के माध्यम से किया है और राजनीति को प्रभावित करने वाले सामाजिक तत्वों के प्रति जनता का ध्यान आकृष्ट करते हुए राजनीतिक चेतना को मुखरित किया है। राष्ट्रीय आंदोलन के दौर में नारियों पर सामंती शिकंजा अधिक कसा हुआ था, लेकिन उनकी समस्याओं से संबंध सुधारवादी आंदोलनों द्वारा नारियों को राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय बनाया गया। प्रेमचंद ने नारी की जीवन परिस्थितियों में निहित अन्याय को उभार कर रखा और वेश्यावृत्ति, बेमेल विवाह, दहेज प्रथा, पतिव्रत धर्म के खिलाफ तथा स्त्री शिक्षा और विधवा विवाह के पक्ष में लिखकर नारियों पर सामंती व्यवस्था की पाशविक जकड़ को ढीला करने और किस प्रकार उनके व्यापक जन आंदोलन से जोड़ने की दिशा में काम किया ।। स्वाधीनता संग्राम के दौरान प्रेमचंद ने अपनी कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से भारत की सोयी जनता को जगाने का कार्य किया ।वे उन लोगों से चिंतित थे, जो तुच्छ स्वार्थ के लिए अंग्रेजों का साथ देते थे। साथ ही देशभक्तों के प्रति उनमें अत्यधिक सम्मान था। प्रेमचंद ने रंगभूमि, प्रेमाश्रम, गबन, कर्मभूमि जैसे उपन्यासों में गांधी जी के सत्याग्रह, हृदय परिवर्तन, स्वाधीनता संग्राम, सत्य ,अहिंसा तथा आश्रमों आदि की स्थापना आदि की चर्चा की है।

निष्कर्ष–

प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य (1908–1936 ई.) द्वारा नारी की दयनीयता का चित्रण कर उन्हें इससे ऊपर उठने के लिए नई सोच एवं नई दिशा प्रदान की ।प्रारंभ में लेखक ने सिर्फ नारी समस्याओं का चित्रण किया है। लेकिन धीरे धीरे नारियों का मुखर, जागरुक एवं विकासात्मक रूप दिखलाई पड़ता है। जो जरूरत पड़ने पर समाज की रूढ़ियों आडंबरों आदि का खुलकर विरोध करती हैं। सक्रिय राजनीति में भी अपना दबदबा रखती हैं। किंतु प्रेमचंद का नारी जागरण कहीं भी पाश्चात्य का अंधानुकरण नहीं करता । प्रेमचंद का उद्देश्य था नारियों की समस्याओं से परिचित कर उन्हें जागरुक एवं सचेत करना ताकि वे अपने प्रतिष्ठा की लड़ाई खुद लड़ सकें। जहां आधुनिक काल में

भी नारियों को केवल अबला एवं श्रद्धा से सम्मानित कर मानवता की परिधि से ही निष्कासित कर दिया जाता है। आज भी स्त्रियां मानसिक एवं जैविक स्तर पर शोषित होती हैं।

संदर्भ

1. भारतीय नारी जीवन की कहानियाँ, प्रकाशक, कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, नरक का मार्ग, मुंशी प्रेमचन्द
2. वही, नया विवाह, मुंशी प्रेमचन्द
3. वही, सौत, मुंशी प्रेमचन्द
4. वही, कुसुम, मुंशी प्रेमचन्द
5. वही, सोहाग का शव, मुंशी प्रेमचन्द
6. वही, ममता, मुंशी प्रेमचन्द
7. वही, स्वामिनी, मुंशी प्रेमचन्द
8. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1994, पृष्ठ सं. 94
9. रामधन मीना, पुनर्जागरण के अख्याता रू मैथिलीशरण गुप्त, चिन्मय प्रकाशन, जयपुर, सं. 1991, पृष्ठ सं. 3
10. शंभूनाथ, प्रेमचंद का पुनर्मूल्यांकन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1988, पृष्ठ सं. 26
11. प्रेमचंद ,नारी जीवन की कहानियां प्रेम प्रकाशन मंदिर ,दिल्ली, 1987, पृष्ठ संख्या 51.
12. अमृतराय, प्रेमचंद रू विविध प्रसंग– भाग 2, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1962, पृष्ठ संख्या 265
13. प्रेमचंद, नारी जीवन की कहानियां, प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली, 1987, पृष्ठ संख्या 63
14. वही, पृष्ठ संख्या 22 10. वही, पृष्ठ संख्या 61
15. शिवरानी देवी, प्रेमचंद– घर में, आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली, 1956, पृष्ठ संख्या 113.
16. अमृतराय, प्रेमचंदरू विविध प्रसंग– भाग 3, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1962, पृष्ठ सं 254
17. शिवरानी देवी, प्रेमचंद– घर में, आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली, 1956, पृष्ठ संख्या 205